Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 5 | ISSN : 2581- 6306

जन आंदोलन से प्रभावित कविताएं और कविताओं का निहितार्थ

डॉ अर्चना त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर, डॉ भीमराव अंबेडकर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय।

Article Info
Volume 4, Issue 5
Page Number : 41-45
Publication Issue :
September-October-2021
Article History
Accepted : 01 Sep 2021
Published : 09 Sep 2021

सारांश- जनआंदोलन से प्रभावित कविताएँ कई सवालों-जवाबों के साथ विमर्श का रास्ता तैयार करती है। आज जरूरत है इन विमर्शों के द्वारा कविता के माध्यम से एक अलग रास्ता इख्तियार करने की जो समाजवाद, साम्यवाद की स्थापना कर सके।

मुख्य शब्द- जन, आंदोलन, कविता, निहितार्थ, समाजवाद, साम्यवाद।

'अकेला आदमी जब
एक तंत्र के खिलाफ लड़ता है
तो अपने सारे हथियारों के बावजूद
एक काले पहाड़ से
निहत्थी लड़ाई ही करता है।'[1]

राजनीतिक कविता लिखना अपने आप में एक बड़ा और मुश्किल कार्य है और क्रांतिकारी यानी जन आंदोलनकारी कविता लिखना सबसे मुश्किल है ऐसे में आंदोलन से प्रभावित कवियों की कविताओं ने अपने स्पष्ट क्रांतिबोध, क्रांतिकारी विचारधारा और जनसंघर्षों में सक्रिय भागीदारी से संभव कर दिखाया। ये कविताएँ मात्र कविताएँ नहीं 'जनांदोलन की मशाल' हैं, जिसमें शोषण मुक्त समाज का विराट स्वप्न दिखाई पड़ता है। जनांदोलनकारी कविताओं ने उस समय की हिंदी कविता के पूरे परिदृश्य में एक जबरदस्त बदलाव को संभव कर दिखाया।

कुमार विकल जैसे और अन्य तमाम जनांदोलनकारी कवि यह मानते थे कि 'कविता आदमी का निजी मामला नहीं है।' जनांदोलनकारी, प्रगतिशील कवि कविता की कला के प्रति अपनी जिम्मेदारी को अपने समय और समाज के शोषित और पीडित मनुष्य के प्रति नैतिक और मानवीय जिम्मेदारी के साथ जोड़कर देखते थे, इसलिए ये कवि अपनी काव्य-यात्रा में दोहरे तिहरे संघर्ष का सामना करते दिखते हैं। एक तरफ ये कवि समाज में बढ़ रहे शोषण, दरिदंगी के खिलाफ संघर्ष कर रहे थे दूसरी तरफ अपनी कविता को संप्रेषणीय बनाने के लिए रचनात्मक संघर्ष कर रहे थे ओर इसे बचाने के संघर्ष के क्रम में कवि कई बार हताश होता है, टूट जाता है।

"इस शहर में तांगे क्यों नहीं चलते
मैं किसी घोड़े की गरदन से लिपटकर रोना चाहता हूँ

[1] आठवें दशक की हिंदी कविता, संपादक, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, पृ. 101

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

और बहुत रोना चाहता हूँ
कि जब भी कोई कवि
अपनी कविता को
शहर के संभ्रांत हिस्से में लेकर जाता है,
वह हमेशा टूटकर वापस आता है।"[2]

इस पंक्ति में सिर्फ कुमार विकल की वेदना ही नहीं है उन तमाम अतिशय संवेदनशील कवि की छटपटाहट है जो किसी न किसी रूप में समाज को जगाने का काम करते रहे हैं। जनांदोलनकारी कविताएँ यद्यपि अन्य की अपेक्षा कम लिखी गईं पर समाज पर अपनी छाप छोड़ने में कामयाब रहीं, दुर्भाग्य रहा कि जनांदोलन से प्रभावित कविताएँ बहुत समय तक हिंदी जगत में छाई न रह सकी इसके पीछे कारण रहा कि ये कविताएँ अपना आलोचक साथ लेकर नहीं चली। छायावाद के बाद देखें तो हर प्रवृत्ति की कविता अपनी आलोचक साथ लेकर चली और वह प्रकारांतर से उसे अनुशासित करता गया।

राजनीतिक कविता....जहाँ एक तरफ आधुनिक हिंदी कविता आधुनिकतावाद, कलावाद और रूपवाद के दलदल से निकलकर बार-बार किसी न किसी रूप में पुन: उसमें फँसती रही है, वहीं बाबा रामचंद्र से लेकर सहजानंद ने सदियों से सोए भारतीय गाँवों को झकझोरकर चेतना की जो लहर फैलाई थी उसका असर हिंदी कविताओं पर अवश्य पड़ा और कविता कलावाद, रूपवाद से बाहर निकलकर जन सामान्य की बात करने लगी थी।

साठ के बाद का दशक भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व के लिए हलचल भरा दशक था। विश्व स्तर पर पूँजीवादी, साम्राज्यवादी विकृतियों, जकड़बंदी के खिलाफ, छात्रों, नौजवानों, बुद्धिजीवियों के आंदोलन तेज हुए। वियतनाम और क्यूबा जैसे देश अमेरिकी साम्राज्यवाद को चुनौती दी। इस समय तक आते-आते भारतीय जनता की आजादी का उत्साह ठंडा पड़ चुका था। लगातार विफल होती पंचवर्षीय योजनाओं, अमीरी और गरीबी की बढ़ती हुई खाई भारतीय लोकतंत्र का असली चेहरा सामने आ चुका था। नेहरू का समाजवादी शब्दावली अपनी अर्थवत्ता खो चुका था। मिश्रित अर्थव्यवस्था की धूर्तता भरी सामंती और पूँजीवादी अंतर्वस्तु अपने नग्न रूप में सामने आ रही थी। चीन से युद्ध में भारत की पराजय, अकाल, भुखमरी और बढ़ती बेरोजगारी के साथ-साथ मजदूरों और किसानों पर हो रहे उत्पीड़न के कारण भारतीय जनता का इस सत्ता और व्यवस्था से मोहभंग हो चुका था। यहाँ पर प्रसिद्ध शायर फैज की पंक्ति सटीक बैठती है-

"ये दाग-दाग उजाला, ये सबगजीठा सहर
वो इंतजार था जिसका, ये वो सहर तो नहीं।"[3]

सत्ता के दमनात्मक चरित्र से ऊबी जनता के एकजुट होकर बदलाव की माँग करने का और सत्ता द्वारा उसे बर्बर तरीके से दबा देने का अपना इतिहास रहा है। इसी कड़ी में तेलंगाना आंदोलन जैसे महान किसान संघर्ष को देखा जा सकता है और आगे इसी किसान संघर्ष का विस्तारित रूप नक्सलबाड़ी आंदोलन है और व्यवस्था के विद्रूप चेहरे से लड़ता छात्र आंदोलन जो कि बाद में जेपी के नेतृत्व के कारण संपूर्ण क्रांति आंदोलन महत्वपूर्ण है। इन आंदोलनों का समाज और साहित्य पर व्यापक प्रभाव पड़ा। यही नहीं लोकतंत्र के काले अध्याय के रूप में 1975 में लागू आपातकाल से भी समाज प्रभावित हुआ इसके विरोध में कविताएँ लिखी गईं।

---

[2] पल-प्रतिपल, अक्टू-दिसं, 1997, पृ. 135

[3] भारत: गांधी के बाद, रामचंद्र गुहा, पृ. 37

"सातवें दशक के उत्तरार्ध से लेकर नवें दशक के प्रारंभ तक हिंदी कविता में स्पष्ट रूप से तीन अलग-अलग संसार दिखाई पड़ते हैं। पहला संसार उन लोगों का था, जिन्होंने भूखे, नंगे, फटेहाल लोगों को कविता की दुनिया से पूरी तरह बहिस्कृत कर दिया था। जीवन तथा समाज से कटा यह संसार शासक वर्गों के मूल्यों और अभिरूचियों से प्रभावित और परिचालित था। अशोक वाजपेयी, ध्रुव शुक्ल, प्रयाग शुक्ल जैसे कवि इसमें शामिल थे। कविता का दूसरा संसार ऐसे कवियों का था जिनका चरित्र पूरी तरह मध्यवर्गीय था, पर बौद्धिक धरातल पर वामपंथी राजनीति, मार्क्सवाद और सामान्य जनों के प्रति सहानुभूति रखते थे। इन कवियों की पीड़ा यह थी कि वे अपनी सामाजिक और वर्गीय स्थिति को सुरक्षित भी रखना चाहते थे और जनता के प्रतिनिधि प्रगतिशील कवि भी बने रहना चाहते थे। राजेश जोशी, असद जैदी, इब्बार रब्बी, उदय प्रकाश और अरुण कमल इस दूसरे संसार के प्रतिष्ठित कवि हैं। कविता का तीसरा संसार ऐसे कवियों का था जिन्होंने तत्कालीन जनसंघर्षों से पूरी तरह अपने को जोड़े रखा और सत्ता एवं व्यवस्था के क्रूर दमन का अपनी कविताओं में खुलकर विरोध किया। अपनी जनपक्षधरता को लेकर वे किसी भी खतरे को उठाने को तैयार थे। कुमार विमल, कुमारेंद्र पारसनाथ सिंह, आलोक धन्वा, वेणु गोपाल, ज्ञानेंद्रपति, गोरख पांडेय, वीरेन डंगवाल इत्यादि माने जाते हैं।"[4]

इन कवियों के अलावा नागार्जुन, मुक्तिबोध, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, धूमिल को इसी धारा के कवि के रूप में जाना जाता है।

स्पष्ट है कि मनुष्य और उसकी मनुष्यता की मुक्ति में आस्था रखने वाले को पता है कि शोषण से मुक्ति का इतिहास उतना ही पुराना है जितना शोषण का। किसान आंदोलन को समझना समाज की उत्पीडित, दमित, शोषित और तबाह खेतिहर आबादी की मुक्ति के घुमावदार मार्गों को समझना है।

"मार्क्स मानते थे कि एक प्राकृतिक और सामाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य की समस्याओं के समाधान भी प्रकृति और समाज में मौजूद होते हैं। किसी वस्तु की जरूरत है तो जरूरत की वस्तु भी सत्ता में है। कृत्रिम रूप से पैदा की गई जरूरतों को छोड़ दें तो वस्तुत: जरूरतों को पूरा करना ही मुक्ति है। हेगेल ने कहा था स्वतंत्रता अनिवार्यता का ज्ञान है। मार्क्स ने जोड़ा कि स्वतंत्रता अनिवार्यता के ज्ञान के साथ ही अनिवार्यता को व्यवहार द्वारा अपने नियंत्रण में लाना है। अनिवार्यता मनुष्य के जीवन में हमेशा बनी रहेगी लेकिन उत्पादन और रचना के जरिए मनुष्य अपनी स्वतंत्रता का क्षेत्र भी विस्तृत करता जाएगा।"[5]

मार्क्स द्वारा परिकल्पित उस समाज, रचना और संघर्ष को आगे बढ़ाने में जनांदोलनकारी यानी तीसरी धारा के कवियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

20वीं सदी के उत्तरार्ध और 21वीं सदी के जनांदोलनों का रूप पहले के आंदोलनों से कुछ मायनों में बदल चुका है। पाँचवे दशक में भूदान, ग्रामदान, अछूतोद्धार, जमींदारी, जागीरदारी विरोधी अभियान, जाति-प्रथा तोड़क अभियान जैसे आंदोलन हुआ करते थे, जो कि समय के साथ महत्वपूर्ण थे, इन आंदोलनों के प्रभाव में कविताएँ समाज की बुराइयों, शोषण के खिलाफ लिखी गईं। बाद में तेलंगाना, नक्सलबाड़ी और संपूर्ण क्रांति आंदोलन जैसे बड़े आंदोलन हुए जिसमें सशस्त्र संघर्ष को अनदेखा नहीं किया जा सका, फलस्वरूप ओज से पूर्ण, पूरे तेवर के साथ कविताएँ समाने आईं।

जनांदोलनकारी कविताओं के विषय में कहा जाता रहा है कि ये कविताएँ नीरस और शुष्क होती हैं इस शोध में इस बात को खारिज किया गया है। जनांदोलनकारी कविताएँ सिर्फ नारेबाजी, शुष्क और नीरसता के घेरे में नहीं बाँधी जा

[4] पल-प्रतिपल, अक्टू-दिसं. 1997, पृ. 155-56

[5] लोहा गरम हो गया है, गोरख पांडेय, पृ. 139

सकतीं। नागार्जुन, गोरख पांडेय, आलोक धन्वा, कुमार विमल, वेणु गोपाल जैसे जनांदोलनकारी कवि जीवन के अन्य सरस पहलुओं पर भी लिख रहे थे लेकिन प्रगतिवादी दृष्टिकोण के साथ। नागार्जुन एक तरफ 'वह कौन था', भोजपुर जैसी कविताएँ लिखते हैं वहीं दूसरी तरफ 'गुलाबी चूडियाँ' भी लिखते हैं। आलोक धन्वा एक तरफ 'गोली दागो पोस्टर' लिखते हैं वहीं 'भागी हुईं लड़कियाँ' और 'सफेद रात' जैसी कविता भी लिखते हैं।

जनआंदोलन से प्रभावित हिंदी कविताओं में धर्म के नाम पर हो रही हत्या, हिंसा का प्रखर विरोध किया गया। तत्कालीन व्यवस्था का धार्मिक, राजनीतिक रूप आज के समाज को पूरी तरह लील ले रहा है। धर्म के ठेकेदार धार्मिक उन्माद के चूल्हे पर स्वार्थ की रोटियाँ सेंकते रहे हैं। वोटो की कलुषित राजनीति ने इसे और भी गंदा कर दिया है। तत्कालीन सत्ता में आई भाजपा सरकार द्वारा छात्र आंदोलन को बर्बर तरीके से दबाने की रणनीति से सत्ता के दमनात्मक चरित्र को एक बार फिर देखा जा सकता है। धर्म के नाम पर आए दिन हो रहे सांप्रदायिक दंगे थमने का नाम नहीं ले रहे। सीरिया और इजराइल जो कि शिया और सुन्नी धर्म की लड़ाई होते हुए व्यापक हिंसात्मक रूप धारण कर लिया है। ऐसे में जनआंदोलन से प्रभावित कविताएँ प्रासंगिक हो जाती हैं।

'फूल खिल आए हैं' शीर्षक कविता में गोरख साफ तौर पर धर्म से उत्पन्न अराजकता को दिखाते हैं-

"मैं कहना चाहता कि हत्या
देखो, लोगों, कुछ अंधे विश्वासों
के नाम पर हत्या हो रही है।"[6]

आज समस्याओं के केंद्र में साम्राज्यवादी औपनिवेशिक नीतियाँ हैं जो मनुष्य की संवेदन क्षमता को कुंद करके इसे अपने परिवेश, परिवार, समाज को युगीन स्थितियों से काटना चाहती हैं। भले ही, साम्राज्यवाद के चेहरे अलग हुए हों, धड़ वही पुराना है। मनुष्य को महज एक बाजार का प्रोडक्ट बनाना ही इनके प्रमुख मंसूबे हैं जिससे साम्राज्यवादी महाशक्तियों को लगातार सफलताएँ मिल रही हैं।

स्पष्ट है कि किसान आंदोलन की ऐतिहासिक एवं वैचारिक पड़ताल की आज सख्त जरूरत है। आज जरूरत है साम्राज्यवादी शक्तियों को धक्का देने की। ऐसे निर्णायक दौर में दलित, शोषित, आदिवासी, स्त्री, अल्पसंख्यक, बहुसंख्यक, किसान, मजदूर, छात्र, नौजवान, बुजुर्ग, शहरी, ग्रामीण, सभ्य-असभ्य तक साम्राज्यवाद (भूमंडलीकरण, उदारीकरण, निजीकरण-प्रवंचीकरण) विरोधी मुहिम चलाने की। आज हो रहे सामाजिक, नव सामाजिक आंदोलनों पर लेखकों को एक बार फिर से उसी तेवर के साथ लिखने और जनता के सामने लाने की जरूरत है। जरूरत है एक बार फिर से जन में शामिल होकर जनता का आदमी बनने की, क्योंकि दुनिया रोज बनती है और समय का पहिया चलता रहता है।

जनआंदोलन से प्रभावित कविताएँ कई सवालों-जवाबों के साथ विमर्श का रास्ता तैयार करती है। आज जरूरत है इन विमर्शों के द्वारा कविता के माध्यम से एक अलग रास्ता इख्तियार करने की जो समाजवाद, साम्यवाद की स्थापना कर सके।

यही नहीं आज के समाज को जरूरत है फिर से नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, धूमिल, गोरख पांडेय, पाश, वरवरराव, चेराबंडा राजु, वेणु गोपाल, कुमार विकल, आलोक धन्वा की, तभी कोई लिख सकता है- 'गोली दागो पोस्टर' या फिर 'कारागृह' में कैद दोस्तों मत हड़बड़ाना हम तुम्हें छुड़ाने आ रहे हैं।

---

[6] स्वर्ग से विदाई, गोरख पांडेय, पृ. 18

सन्दर्भ

1. आधुनिक कविता यात्रा – रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. प्रगतिवादी आंदोलन का इतिहास, कर्ण सिंह चौहान, प्रकाशन संस्थान, दिल्ली।
3.नागार्जुन रचनावली, भाग 1–2, शोभाकांत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।